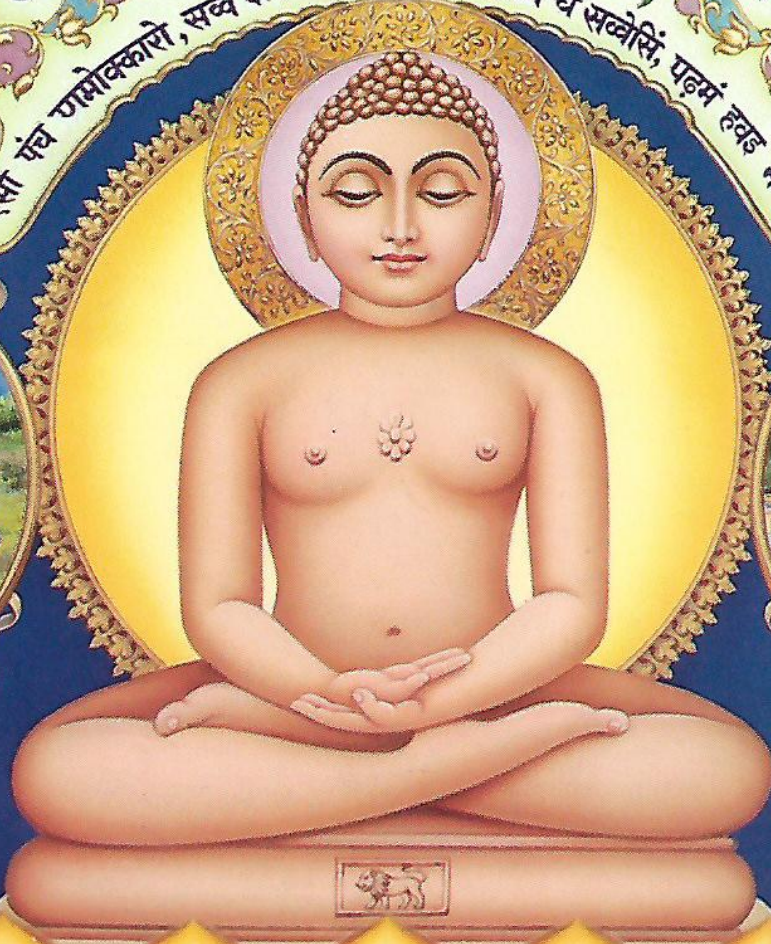


महावीर पदावली

तीर्थंकर महावीर से संबंधित भक्ति-संग्रहित श्रेष्ठ पदों का संग्रह

ॐ
 णमो अरिहंताणं, णमो उवज्झायाणं
 णमो आयरियाणं, णमो सिद्धाणं
 णमो लोए सब्ब साहूणं,
 एसो पंच णमोक्कारो, सब्ब पाव घणासणो। मंगलाणं च सब्बेसिं, पढमं हवइ मंगले॥



27	20	सि	19	24
28	21	र	20	25
29	22	प	21	26
30	23	य	22	27
31	24	रा	23	28
1	25	का	24	29
2	26	ख	25	30
3	27	ग	26	31
4	28	घ	27	1
5	29	ङ	28	2
6	30	च	29	3
7	31	छ	30	4
8	1	ज	1	5
9	2	झ	2	6
10	3	ट	3	7
11	4	ठ	4	8
12	5	ड	5	9
13	6	ण	6	10
14	7	त	7	11
15	8	थ	8	12
16	9	द	9	13
17	10	ध	10	14
18	11	न	11	15
19	12	प	12	16
20	13	फ	13	17
21	14	ब	14	18
22	15	भ	15	19
23	16	म	16	20
24	17	य	17	21
25	18	र	18	22
26	19	ल	19	23
27	20	व	20	24
28	21	श	21	25
29	22	ष	22	26
30	23	ह	23	27
31	24	प्र	24	28
1	25	ज	25	29
2	26	झ	26	30
3	27	ट	27	31
4	28	ठ	28	1
5	29	ड	29	2
6	30	ण	30	3
7	31	त	31	4
8	1	थ	1	5
9	2	द	2	6
10	3	ध	3	7
11	4	न	4	8
12	5	प	5	9
13	6	फ	6	10
14	7	ब	7	11
15	8	भ	8	12
16	9	म	9	13
17	10	य	10	14
18	11	र	11	15
19	12	ल	12	16
20	13	व	13	17
21	14	श	14	18
22	15	ष	15	19
23	16	ह	16	20
24	17	प्र	17	21
25	18	ज	18	22
26	19	झ	19	23
27	20	ट	20	24
28	21	ठ	21	25
29	22	ड	22	26
30	23	ण	23	27
31	24	त	24	28
1	25	थ	25	29
2	26	द	26	30
3	27	ध	27	31
4	28	न	28	1
5	29	प	29	2
6	30	फ	30	3
7	31	ब	31	4
8	1	भ	1	5
9	2	म	2	6
10	3	य	3	7
11	4	र	4	8
12	5	ल	5	9
13	6	व	6	10
14	7	श	7	11
15	8	ष	8	12
16	9	ह	9	13
17	10	प्र	10	14
18	11	ज	11	15
19	12	झ	12	16
20	13	ट	13	17
21	14	ठ	14	18
22	15	ड	15	19
23	16	ण	16	20
24	17	त	17	21
25	18	थ	18	22
26	19	द	19	23
27	20	ध	20	24
28	21	न	21	25
29	22	प	22	26
30	23	फ	23	27
31	24	ब	24	28
1	25	भ	25	29
2	26	म	26	30
3	27	य	27	31
4	28	र	28	1
5	29	ल	29	2
6	30	व	30	3
7	31	श	31	4
8	1	ष	1	5
9	2	ह	2	6
10	3	प्र	3	7
11	4	ज	4	8
12	5	झ	5	9
13	6	ट	6	10
14	7	ठ	7	11
15	8	ड	8	12
16	9	ण	9	13
17	10	त	10	14
18	11	थ	11	15
19	12	द	12	16
20	13	ध	13	17
21	14	न	14	18
22	15	प	15	19
23	16	फ	16	20
24	17	ब	17	21
25	18	भ	18	22
26	19	म	19	23
27	20	य	20	24
28	21	र	21	25
29	22	ल	22	26
30	23	व	23	27
31	24	श	24	28
1	25	ष	25	29
2	26	ह	26	30
3	27	प्र	27	31
4	28	ज	28	1
5	29	झ	29	2
6	30	ट	30	3
7	31	ठ	31	4
8	1	ड	1	5
9	2	ण	2	6
10	3	त	3	7
11	4	थ	4	8
12	5	द	5	9
13	6	ध	6	10
14	7	न	7	11
15	8	प	8	12
16	9	फ	9	13
17	10	ब	10	14
18	11	भ	11	15
19	12	म	12	16
20	13	य	13	17
21	14	र	14	18
22	15	ल	15	19
23	16	व	16	20
24	17	श	17	21
25	18	ष	18	22
26	19	ह	19	23
27	20	प्र	20	24
28	21	ज	21	25
29	22	झ	22	26
30	23	ट	23	27
31	24	ठ	24	28

22	3	6	12	16
18	20	21	2	7
1	13	14	23	
10	28	29	4	10
16	11	19	22	8

YOGENDRA
 2007-08-21

प्रकाशक

श्री कुन्दकुन्द भारती न्यास

18-बी, स्पेशल इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली-110067

विद्यालय-उद्दिष्ट

(विद्यालय के लिए उपयुक्त और उपयोगी विषयों पर विद्यार्थियों के लिए)

भगवान महावीर के 2600वें जन्म-महोत्सव के उपलक्ष्य में प्रकाशित

महावीर-पदावली

(तीर्थंकर महावीर से सम्बन्धित भक्ति-संगीतमय श्रेष्ठ पदों का संग्रह)

मंगल प्रेरणा एवं आशीर्वचन : आचार्य श्री विद्यानन्द मुनिराज

सम्पादन-अनुवाद : डॉ० वीरसागर जैन

प्रथम संस्करण : दशलक्षण महापर्व, सन् 2001 ई०

मूल्य : 10 रुपये

मुद्रक : प्रिंटिड प्रिथा ऑफसेट प्रा. लि. दूरभाष: 5708654-55

प्राप्ति-स्थान

श्री कुन्दकुन्द भारती,

18-बी, स्पेशल इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली-110067

दूरभाष : 6564510, 6513138

सिद्धान्तचक्रवर्ती, परमपूज्य आचार्य श्री विद्यानन्दजी मुनिराज के
मंगल आशीर्वचन

भक्ति और संगीत

संगीत कला है, उससे रहित मनुष्य पशु है —

‘नीतिशतक’ में लिखा है— “साहित्यसंगीतकलाविहीनः साक्षात् पशुः पुच्छविषाणहीनः” अर्थात् साहित्य, संगीत और कलाओं से अनभिज्ञ मनुष्य पशु है; क्योंकि कला से जीवन उन्नत होता है, कला जीवन को सँवारती है। मनुष्य के वस्त्र, भवन, संस्कार, सुवेष सभी कलात्मकता के परिचायक हैं। पशु की तृप्ति मात्र आहार लेने एवं पानी पीने से हो जाती है, पर मनुष्य उतने से तृप्त नहीं होता। यदि होता है, तो वह पशुत्व से ऊपर नहीं उठा है या नितान्त वैरागी है। कहा भी है कि—

“सुभाषितेन गीतेन, बालानां च लीलया।

यस्य न द्रवते चित्तं, स मुक्तोऽथवा पशुः॥”

जो सूक्ति सुनकर, गीत सुनकर अथवा बालकों की लीला-चेष्टाएँ देखकर द्रवित नहीं होता, वह या तो मुक्त महात्मा है अथवा पशु है। संसारी व्यक्ति तो संगीत-ध्वनि से अवश्य प्रभावित होगा।

संगीतात्मक प्रार्थना से भक्त भगवान के सदृश हो जाता है —

महाकवि जन्न ने अपने अनंतनाथ काव्य में लिखा है—

“कल्ल करगुवदु। उग्रफणि सोल्लुवदु। वणभरं पल्लिविपुदु। एरलिसिलकुवदु पशु मोहिपदु। निल्लदे अलुव एले पसुले। संतंसव नेदुवदु। मुगिलो सर्दु मले गरेवदु। सल्ललिते संगीतरसके यन्नं निन्नते माडनंत जिनेन्द्र।”

यहाँ संगीत की महिमा का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि संगीत से पत्थर पिघल जाता है, भयंकर सर्प सौम्य हो शिर डुलाने लगता है, पुरुष-पल्लव अधिकता से विकसित होने लगते हैं, पशु मोहित-मुग्ध हो जाते हैं, निरन्तर रुदन करने वाला बालक शान्त हो जाता है, बादल बरसने लगते

4 : महावीर-पदावली

हैं। हे भगवन् जिनेन्द्रदेव ! संगीतात्मक प्रार्थना क्या मुझे तन्मयता प्रदान कर आप सदृश नहीं बना सकती ?

संगीत : ध्वनि की सुन्दर रचना —

संगीत से कुलौंच भरते हरिण स्तब्ध हो पास आ जाते हैं, गजराज वशीभूत हो जाते हैं, दीपकराग गाकर तानसेन ने बिना अग्नि के दीप जला दिये — ऐसी ऐतिहासिक श्रुति है। गीतों का वनस्पतियों पर संवर्धन-प्रभाव होता है। संगीत में काल-ताल-लय-मात्राओं द्वारा एक ऐसी ध्वनि-शक्ति उत्पन्न की जाती है जो मनःप्राण को अधीन कर लेती है। इसीलिये कहा है—

“योऽयं ध्वनिविशेषस्तु स्वरवर्ण विभूषितः।

रंजको जनचित्तानां स रागः कथितो बुधैः॥”

जो विशेष ध्वनि उत्पन्न करने वाला स्वर-वर्ण मनुष्यों के चित्त का अनुरंजन करता है, उसे राग कहते हैं।

गीत, नृत्य, वाद्य तीनों संगीत हैं। “संगीतः ध्वनिसम्भूतिः” ध्वनि की सुन्दर रचना संगीत है।

संगीत : श्रम-निवारक, मनःप्रसादक —

पानी खींचते हुए खेतों की सिंचाई करनेवाले प्रायः लोकगीत गाते रहते हैं, पशुओं के गले में घंटियाँ बाँध देते हैं। इससे उन्हें थकान नहीं होती। स्त्रियाँ जब धान कूटती हैं, चक्की से आटा निकालती हैं, तब उनकी चूड़ियों की झनकार उनके श्रम का भान कम कर देती हैं। धनिकों के उद्यानों में मयूर नाचते हैं, कोकिल कुहू-कुहू बोलता है, अनेक चिड़ियाएँ प्रातः-सायं वृक्षों पर आनन्दराग सुनाते हैं— इससे मन प्रसन्न होता है, इच्छाओं को स्फूर्ति मिलती है।

ॐकार परमसंगीत है —

भगवान् की स्तुति के पद भजन और श्लोकमय हैं। उन्हें गाकर तन्मयता

का बोध होता है। विविध रागों में गाये हुए पद मन में शान्ति उत्पन्न करते हैं। इस प्रकार संगीत भक्ति में सहायक है। ॐकार परम संगीत है। यह ईश्वर वाचक शब्द है। नाभिकेन्द्र से उठकर लघु, दीर्घ और प्लुत में उच्चारण किया गया "ओ३म्" शब्द शक्ति के तीनों आयामों को परिवेष्टित कर लेता है।

संगीत से तन्मयता होकर ध्यान-सिद्धि होती है —

भक्ति के लिये तन्मयता और तन्मयता के लिए नाद-सौन्दर्य आवश्यक है। नाद-सौन्दर्य की भावना संगीत को जन्म देती है। वीणा की झंकार, वेणु की स्वर-माधुरी, मृदंग-मुरज-पर्णव-दर्दुर-पुष्कर-मंजीर आदि अनेक वाद्य प्राणों में एकीभाव उत्पन्न करते हैं। एकीभाव से ध्यान-सिद्धि होती है। मन-वचन-काय एकनिष्ठ होकर समाधि का अनुभव करते हैं।

"सप्त स्वरास्त्रयो ग्रामा मूर्च्छनाश्चैकविंशति" अर्थात् सात स्वर, तीन ग्राम, इक्कीस मूर्च्छनाएँ, इत्यादि संगीत के विस्तार हैं। षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद — ये सात स्वर हैं। यथा—

"षड्जं रौति मयूरं ऋषभं वृषभोऽप्यजश्च गान्धारम्।

क्रौंचः पिकश्च मध्यमपंचमस्वरौ समुच्चरतः॥

धैवतमश्वाः ब्रुवते निषादमुच्चारयन्ति मातंगाः।

एवं सप्तस्वराणां पृथक्-पृथक् समुदयं ज्ञेयम्॥"

वीर, शान्त और शृंगार रस को संगीत से शतगुण किया जा सकता है। संगीत से चार व्यक्तियों में गोष्ठीबन्ध होता है, वे मिलकर गाते हैं, तन्मयता अनुभव करते हैं। रणभेरी को सुनकर वीरों के भुजदण्ड फड़क उठते हैं; किन्तु वही कायरों को भयाक्रान्त कर देती है। संगीत विद्या है। इसका विधिवत् अध्ययन करने वाला स्वर-नाद का विद्वान् हो जाता है।

भजन से रख ध्यान

भजन से रख ध्यान प्राणी ! भजन से रख ध्यान ॥ टेक ॥
भजन से इन्द्रादि पद हों, चलत बैठ विमान ।
भजन से हों हरी-प्रतिहरि, बाहुबली बलवान ॥ 1 ॥
भजन से षट्खण्ड नवनिधि, होत भरत समान ।
तिरे भवसागर तुरत, है पाप को अवसान ॥ 2 ॥
भजन से भये पूज्य मुनिजन, गौतमादि महान ।
भजन से ही तिरे भील, जटायु, मेंढक, श्वान ॥ 3 ॥
कहत 'नयनानन्द' जग में, भजन सम न निधान ।
भये भजन से अरिहंत सिद्ध, आचार्य गये निर्वान ॥ 4 ॥

अर्थ :— हे प्राणी ! तू भगवान के भजन में ही सदा अपना ध्यान रख ।

भगवान के भजन से इन्द्रादि पद प्राप्त होते हैं जहाँ विमान में बैठकर विहार किया जाता है । भजन से ही नारायण-प्रतिनारायण के पद प्राप्त होते हैं । बाहुबली भगवान भी भजन से ही हुआ जाता है ।

भगवान के भजन से ही प्राणी षट्खण्ड-साम्राज्य एवं नवनिधियों को प्राप्त करके भरत चक्रवर्ती के समान हो जाता है, जो शीघ्र सर्व पापों का क्षय करके संसार-सागर से भी तिर जाता है ।

गौतमादि मुनिजन भी इस भजन से ही पूज्य एवं महान् हुये थे । भील, जटायु, मेंढक और कुत्ता भी भजन से ही संसार से तिरे थे ।

कविवर नयनानन्द कहते हैं कि इस जगत् में भजन के बराबर कोई सम्पत्ति-भण्डार नहीं है । अरिहंत, सिद्ध, आचार्य आदि परमेष्ठी भी एक इस भजन से ही मोक्ष को प्राप्त हुये हैं ।

प्राक्कथन

“एस सुरासुरमणुसिंदवंदिदं धोदघादिकम्ममलं।
पणमामि वड्ढमाणं तित्थं धम्मस्स कत्तारं।।”

—आचार्य कुन्दकुन्द, प्रवचनसार, गाथा 1

अर्थ :— जो सुरेन्द्र, असुरेन्द्र एवं मनुष्येन्द्र से वन्दित हैं, जिन्होंने घातिकर्मरूपी मल को धो दिया है और जो धर्मतीर्थ के कर्ता हैं, उन वर्द्धमान जिनेन्द्र को मैं भावसहित नमस्कार करता हूँ।

“नमः श्री वर्द्धमानाय निर्द्धतकलिलात्मने।
सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्या दर्पणायते।।”

—आचार्य समन्तभद्र, रत्नकरण्ड श्रावकाचार, श्लोक 1

अर्थ :— जिन्होंने आत्मा की सम्पूर्ण मलिनता को अच्छी तरह धो दिया है और जिनके ज्ञान में अलोक-सहित तीनों लोक दर्पण की भाँति प्रतिबिम्बित होते हैं, उन श्री वर्द्धमान जिनेन्द्र को मैं प्रणाम करता हूँ।

सम्पूर्ण विश्व में तीर्थंकर वर्द्धमान महावीर का 2600वाँ जन्म-महोत्सव उत्साहपूर्वक मनाया जा रहा है। प्रस्तुत ‘महावीर-पदावली’ इसी उपलक्ष्य में अभीक्ष्णज्ञानोपयोगी परमपूज्य आचार्यश्री विद्यानन्द जी मुनिराज की मंगल प्रेरणा से धर्मानुरागी पाठकों के लाभार्थ तैयार की गई है। इसमें भगवान् महावीर के जीवनवृत्त, व्यक्तित्व एवं प्रवचनमृत्तों से सुरभित 26 पद-प्रसून संकलित किये गये हैं, जो सभी एक से बढ़कर एक हैं। मुमुक्षुओं को आजकल के फिल्मी तर्ज पर रचित अशुद्ध भजनों की अपेक्षा इन्हीं उत्तम पदों का गायन उपादेय है।

इन पदों के रचयिता मध्यकालीन हिन्दी-जैन-साहित्य के वे श्रेष्ठ कवि हैं, जो कुशल कवि होने के साथ-साथ सरलहृदय भक्त एवं उच्चकोटि के अध्यात्मवेत्ता भी थे। यही कारण है कि उनके इन पदों में संगीत, भक्ति एवं अध्यात्म की मनोरम त्रिवेणी प्रवाहित हो रही है। अनुभूति और अभिव्यक्ति का ऐसा सुन्दर समन्वय अत्यन्त दुर्लभ है।

आशा है, भाव एवं कला — उभय पक्षों से समृद्ध ये पद प्रत्येक सहृदय पाठक को आकर्षित करेंगे और वे इनके अध्ययन, गायन, चिन्तन से तीर्थंकर महावीर के जीवनवृत्त, व्यक्तित्व एवं प्रवचनों से भली प्रकार परिचित होकर आत्म-कल्याण कर सकेंगे।

कवियों का संक्षिप्त परिचय अन्त में एक परिशिष्ट में दिया गया है।

—वीरसागर जैन

अनुक्रम

क्रम	पद	कवि	पृष्ठ
1.	अब मोहे तार लेहु महावीर.....	द्यानतराय	9
2.	वीर महा महावीर जिनेसुर.....	द्यानतराय	10
3.	महावीर महावीर जीवाजीव छीर-नीर.....	द्यानतराय	11
4.	ग्यान प्रधान लहा महावीर ने.....	द्यानतराय	12
5.	जग में प्रभुपूजा सुखदाई.....	द्यानतराय	13
6.	पावापुर भवि बन्दौ जाय.....	द्यानतराय	14
7.	वर्धमान जस वर्धमान अच्युत.....	द्यानतराय	15
8.	करौं आरती वर्धमान की.....	द्यानतराय	16
9.	री चल बंदिये चल बंदिये.....	द्यानतराय	17
10.	देखे धन्य घरी आज.....	द्यानतराय	18
11.	दिढ़ कर्माचल दलन पवि.....	भूधरदास	19
12.	भजि भजि भजि मन महावीर.....	सिंहकीर्ति	20
13.	माधुरी जिनवांनि चलौ सुकिहौ.....	जगराम	21
14.	नमो नमो जै श्री महावीर.....	जगराम	22
15.	महावीर जिन मुक्ति पधारे.....	जगराम	23
16.	विपुलाचल पर जिनवर आये.....	देवीदास	24
17.	बधाई भई है महावीर.....	बुधजन	25
18.	दर्शन के देखत भूख टरी.....	नयनानन्द	26
19.	जय श्री वीर जिनेन्द्र चन्द्र.....	दौलतराम	27
20.	जय शिवकामिनी-कन्त वीर.....	दौलतराम	28
21.	जय श्री वीर जिनवीर जिनचन्द्र.....	दौलतराम	29
22.	सब मिल देखो हेली म्हारी.....	दौलतराम	30
23.	हमारी वीर हरो भवपीर.....	दौलतराम	31
24.	वन्दौ अद्भुत चन्द्र वीर जिन.....	दौलतराम	32
25.	सिद्धारथ राजा दरबारे.....	बुध महाचन्द्र	33
26.	झूलें श्री वीर जिनेन्द्र.....	हजारी	34
परिशिष्ट- कवि-परिचय			35

(1)

अब मोहे तार लेहु महावीर !
 सिद्धारथ-नन्दन जग-वन्दन, पाप-निकन्दन धीर ॥
 ज्ञानी ध्यानी दानी जानी, बानी गहन-गँभीर ।
 मोष के कारन दोष-निवारन, रोष-विदारन वीर ॥
 समता-सूरत, आनँद पूरत, चूरत आपद पीर ।
 बालयती दृढव्रती समकिती, दुख-दावानल-नीर ॥
 गुण अनन्त भगवन्त अन्त नहिं, शशि कपूर हिम हीर ।
 'द्यानत' एकहु गुण हम पावैं, दूर करैं भव-भीर ॥

अर्थ :— हे महावीर ! अब मेरा भवसागर से उद्धार कर दीजिए । हे सिद्धार्थ के नन्दन ! जगद्वन्द्य पापनाशक ! हे धीर ! अब मुझे पार लगा दीजिए ।

हे भगवान् ! आप केवलज्ञानी हैं, निर्विकल्प आत्मध्यानी हैं, अनुपम दानी हैं । आपकी दिव्यध्वनि गहन और गम्भीर है । आप मोक्ष के कारण हैं, दोषों का निवारण करने वाले हैं और रोष (क्रोध) के विदारण में वीर हैं ।

आपकी वीतराग मुद्रा समता से शोभायमान है । वह आनन्द प्रदान करनेवाली तथा सर्व आपदाओं और पीड़ाओं को नष्ट करनेवाली है । आप बालयति हैं, व्रतों में दृढ़ हैं, सम्यग्दृष्टि हैं, तथा दुःखरूप दावानल को शमन करनेवाले नीर हैं ।

हे भगवन् ! आपमें अनन्त गुण हैं, उनका अन्त नहीं है । आपके गुण चन्द्रमा, कर्पूर, हिम (बर्फ) और रत्नराशि के समान निर्मल हैं ।

कविवर 'द्यानतराय' कहते हैं कि हे भगवन् ! आपके गुणसमुद्र में से हमें एक गुणबिन्दु भी प्राप्त हो जाए तो हम संसार-बाधा को दूर करने में समर्थ हो जाएँ ।

(2)

वीर महा महावीर जिनेसुर,
गौतम मान धनेसुर नाए।
बालक चाल में सील धरेसुर,
चन्दना देखत बन्ध खुलाए।
मेंढक हीन किये अमरेसुर,
दान सबै मनवांछित पाए।
'द्यानत' आजलौं ताही कौ मारग,
सागर है सुख होत सवाए ॥

अर्थ :— महावीर जिनेश्वर के चरणों में महा विद्वान् गौतम ब्राह्मण ने भक्तिपूर्वक अपना सिर नवाया। भगवान् ने अपनी बाल्यावस्था में ही व्रत धारण कर लिये। भगवान् के दर्शन मात्र से बन्धनों में पड़ी हुई चन्दनबाला के बन्धन खुल गये। मेंढक जैसे हीन प्राणी भी भगवान् की भक्ति से देव बन गये और सबकी मनोकामना पूर्ण हो गई।

कविवर द्यानतराय कहते हैं कि उन्हीं भगवान् महावीर का शासन आज तक चल रहा है। उनका धर्म-शासन सागर के समान है। उसे धारण करने की इच्छा मात्र से प्राणी के सुखों में वृद्धि होने लगती है।

(3)

महावीर महावीर जीवाजीव छीर-नीर,
पाप ताप-नीर-तीर धरम की धर है।
आस्रव स्रवत नाँहि बँधत न बन्ध माँहि,
निर्जरा निर्जरत संवर के घर है।
तेरमो है गुनथान सोहत सुकल ध्यान,
प्रगटो अनन्त ज्ञान मुक्त के वर है।
सूरज तपत करै जड़ता कूँ चन्द धरै,
'द्यानत' भजो जिनेश कोऊ दोष न रहै ॥

अर्थ :— भगवान महावीर ने जीव और अजीव का भेद दूध और पानी के समान अलग-अलग करके बता दिया है। उनका नाम संसार के पाप एवं ताप रूपी सरिता से पार होने के लिये नाव के समान है तथा धर्म की धरा है— आधार है। जीव और अजीव का भेदविज्ञान होने के पश्चात् कर्मों का आस्रव और बन्ध नहीं होता। जो कर्म सत्ता में हैं उनकी भी निर्जरा हो जाती है। नवीन कर्मों का संवर (निरोध) हो जाता है। ऐसे भेदविज्ञानी मुनि ही क्षपक श्रेणी में आरोहण करके केवलज्ञान प्राप्त करते हैं और संसार से पार होकर मुक्ति प्राप्त करते हैं।

कविवर द्यानतराय कहते हैं कि सूर्य में तो ताप है और चन्द्रमा में जड़ता है, परन्तु भगवान महावीर का भजन करने से मनुष्य सभी दोषों से मुक्त हो जाता है।

(4)

ग्यान प्रधान लहा महावीर ने,
सेनिक आनँद भेरि बजाई।
मत्त मतंग तुरन्त बड़े रथ,
'द्यानत' सोभत इन्द्र सवाई।
वांभन छत्रिय वेस जु सूद,
सुकामनि भीर घटा उमड़ाई।
कान परी न सुनै कोऊ बात,
सु धूर के पूर कला रवि छाई॥

अर्थ :— जब भगवान महावीर को केवलज्ञान प्राप्त हुआ तो राजा श्रेणिक ने चारों ओर आनन्द-भेरी बजवाई। नाना प्रकार के मत्त हाथी, घोड़े, रथ आदि वाहनों पर बैठकर भगवान के दर्शनों के लिये आये हुए राजा श्रेणिक की शोभा इन्द्र से भी अधिक थी। भगवान के दर्शनों के लिये ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र —सभी वर्णों के स्त्री-पुरुषों की अपार भीड़ एकत्रित हुई।

कविवर द्यानतराय कहते हैं कि उस भीड़ के कारण इतना शोरगुल हो रहा था कि कोई बात किसी के कानों में सुनाई नहीं पड़ती थी। वाहनों के पदक्षेप से इतना धूल का पूर उठा कि सूर्य की आभा भी उससे आच्छादित हो गई।

(5)

जग में प्रभु-पूजा सुखदाई।
 दादुर कमल पाँखुरी लेकर प्रभु-पूजा को जाई।
 श्रेणिक नृप गज के पग से दबि प्राण तजे सुर जाई॥
 द्विजपुत्री ने गिर कैलासे पूजा आन रचाई।
 लिंग छेद देव-पद लीनों अन्त मोक्ष-पद पाई॥
 समोसरण विपुलाचल ऊपर आये त्रिभुवनराई।
 श्रेणिक वसु विधि पूजा कीनी तीर्थकर गोत्र बँधाई॥
 'द्यानत' नरभव सुफल जगत में जिनपूजा रुचि आई।
 देवलोक ताके घर आँगन अनुक्रम शिवपुर जाई॥

अर्थ :— अहो ! संसार में भगवान महावीर की पूजा ही सच्चा सुख देने वाली है।

देखो ! एक मेंढक कमल की पंखुड़ी लेकर भगवान महावीर की पूजा करने की भावना से चला, किन्तु मार्ग में राजा श्रेणिक के हाथी के पैर के नीचे दब गया और मर कर स्वर्ग में देव हुआ। एक द्विज-कन्या ने कैलाश पर्वत पर जाकर भगवान की पूजा की। उसके प्रभाव से उसने स्त्री-लिंग छेदकर स्वर्ग में देव-पद प्राप्त किया और अन्त में मोक्ष प्राप्त किया। एक बार त्रिलोकीनाथ भगवान महावीर का समवशरण विपुलाचल पर आया। वहाँ जाकर श्रेणिक ने बड़े भक्तिभाव से भगवान की अष्ट द्रव्यों से पूजा की; परिणामतः उन्होंने तीर्थकर प्रकृति का बन्ध कर लिया।

कविवर द्यानतराय कहते हैं कि जिन मनुष्यों के मन में भगवान की पूजा की रुचि उत्पन्न हो जाती है, उनका मनुष्य-जन्म सार्थक हो जाता है। उनके लिये स्वर्गलोक घर-आँगन जैसा हो जाता है अर्थात् उन्हें देव-पद प्राप्त करना कठिन नहीं होता, बल्कि वे क्रमशः मोक्ष भी प्राप्त कर लेते हैं।

(6)

पावापुर भवि बंदौ जाय।
परमपूज्य महावीर गये शिव,
गौतम ऋषि केवल गुन पाय।
सो दिन अब लगि सब जग मानै,
दीवाली सम मंगल काय।
कार्तिक मावस-निश तिस जागे,
'द्यानत' अद्भुत पुन्य उपाय।

अर्थ :— हे भव्यजनो ! पावापुर चलो; पावापुर की तीर्थ-यात्रा कर वहाँ भगवान श्री महावीर स्वामी की वन्दना करो। पावापुरी में भगवान महावीर ने मोक्ष पद प्राप्त किया और वहीं पर गणधर गौतम ऋषि ने केवलज्ञान प्राप्त किया। उस पवित्र दिन का स्मरण आज तक सारे संसार में किया जाता है और उसे मंगल पर्व दीपावली के रूप में मनाया जाता है।

कविवर द्यानतराय कहते हैं कि कार्तिक कृष्णा अमावस्या की रात्रि भगवान को मोक्षलक्ष्मी की प्राप्ति हुयी थी। इस तिथि में हम सबको भी अद्भुत पुण्य का उपार्जन करना चाहिये।

(7)

वर्धमान जस वर्धमान अच्युत विमान गति ।
 नगर कुण्डपुर धार सार सिद्धारथ भूपति ॥
 रानी प्रियकारिनी बनी कंचन छवि काया ।
 आयु बहत्तर वरस जोग खरगासन ध्याया ॥
 तुम सात हाथ मृगनाथ पति, तुमतैं अबलौं धरम जर ।
 सिर नाय नमौ जुग जोरि कर, भो जिनिंद भवताप हर ॥

—धर्मविलास, दशस्थान चौबीसी, छन्द 25, पृ० 137

अर्थ :— हे वर्धमान प्रभो ! आपका यश निरन्तर वर्धमान है। आप अच्युत विमान को त्याग कर कुण्डलपुर नगर में पधारे। उस नगर के राजा सिद्धार्थ आपके पिता थे और रानी प्रियकारिणी (त्रिशला) आपकी माता थी। आपके शरीर की आभा स्वर्ण जैसी थी। आपकी आयु बहत्तर वर्ष की थी। आपने दीक्षा लेकर खड़गासन से ध्यान लगाया था। आपकी अवगाहना सात हाथ की थी। सिंह आपका चिह्न है। आपके द्वारा प्ररूपित धर्म ही अबतक जगत में परमधर्म का मूल है।

कविवर दानतराय कहते हैं कि हे प्रभो ! मैं आपके चरणों में हाथ जोड़कर एवं सिर झुकाकर प्रणाम करता हूँ; आप मेरा संसार-दुःख दूर कीजिये।

(8)

करौं आरती वर्धमान की। पावापुर निरवाण-थान की।
 राग विना सब जगजन तारे। दोष विना सब कर्म विडारे॥
 सील धुरन्धर सिव-तिय-भोगी। मन-वच-कायन कहिये जोगी।
 रत्नत्रयनिधि परिग्रह डारी। ग्यान-सुधा भोजन व्रतधारी॥
 लोक अलोक व्यापि निज माहीं। सुखमय इन्द्री सुख-दुख नाहीं।
 पंचकल्याणक पूज्य विरागी। विमल दिगम्बर अम्बर त्यागी॥
 गुणमनिभूषण भूषण स्वामी। जगत उदास जगंतरजामी।
 कहै कहाँ लौं तुम सब जानौ। 'द्यानत' की अभिलाख प्रमानौ॥

—धर्मविलास, आरती दशक, पद 8, पृ० 154

अर्थ :— मैं तीर्थकर वर्धमान की आरती करता हूँ, जिनकी निर्वाण-भूमि पावापुर है।

तीर्थकर वर्धमान राग-रहित हैं, तथापि संसार के लोगों को तारनेवाले हैं; द्वेष-रहित हैं, तथापि समस्त कर्मों का क्षय करनेवाले हैं; महा शीलव्रत के धारक हैं, तथापि मोक्षस्त्री का भोग करनेवाले हैं, मन-वचन-काय से सहित हैं तथापि योगी कहलाते हैं; परिग्रह-रहित हैं, तथापि उनके पास रत्नत्रय की सम्पत्ति का भण्डार भरा हुआ है; ज्ञानामृत का भोजन करते हैं, तथापि व्रती-उपवासी हैं; वे लोकालोक व्यापी हैं, तथापि आत्मा में ही लीन हैं; वे अनन्त सुखमय हैं, तथापि उनके इन्द्रिय सुख-दुःख नहीं है; वे पंचकल्याणकों से पूज्य हैं, तथापि वीतरागी हैं, वे निर्मल दिशाओं रूपी वस्त्रों के धारक हैं, तथापि वस्त्ररहित हैं। वे जगत् के आभूषणों से रहित हैं, तथापि आत्मिक गुणरूपी मणिओं के आभूषण से सुशोभित हैं। वे जगत् से विरक्त हैं, तथापि सम्पूर्ण जगत् के अन्तर्यामी हैं।

कविवर द्यानतराय कहते हैं कि हे प्रभो ! मैं कहाँ तक कहूँ आप तो सब जानते हैं। बस, मेरी अभिलाषा पूर्ण कर दीजिये।

(9)

री चल बंदिये चल बंदिये री, महावीर जिनराय।
पाप निकंदिये महावीर जिनराय।
वारी वारी महिमा कहिय न जाय।
विपुलाचल पर्वत पर आया समवसरन बहु भाय॥
गौतमरिख से गनधर जाके, सेवत सुर-नर पाय।
बिल्ली मूसे गाय सिंह सों, प्रीति करै मन लाय॥
भूपति सहित चेलना रानी, अंग-अंग हुलसाय।
'द्यानत' प्रभु को दरसन देखैं, सुरग-मुक्ति सुखदाय॥

अर्थ :— हे सखी ! आओ चलें, महावीर जिनेन्द्र की वन्दना करेंगे।

महावीर जिनेन्द्र पापों को नष्ट करनेवाले हैं। उनकी महिमा कैसे भी कही नहीं जा सकती है। विपुलाचल पर्वत पर उनका बहुत सुन्दर समवशरण आया हुआ है।

उस समवशरण में गौतम स्वामी जैसे महान् ऋषि गणधर हैं, सभी देव-मनुष्य उनके चरणों की सेवा कर रहे हैं, और बिल्ली-चूहा, गाय-सिंह आदि जन्मजात-विरोधी जीव भी हृदय से प्रेम कर रहे हैं।

राजा श्रेणिक भी अपनी चेलना रानी के साथ अत्यन्त हर्षित होकर भगवान के समवशरण में आये हैं।

कविवर द्यानतराय कहते हैं कि इन भगवान महावीर प्रभु के दर्शन करने से जीव को स्वर्ग-मोक्ष के सुखों की प्राप्ति होती है।

(10)

देखे धन्य घरी, आज पावापुर महावीर।
गौतमस्वामि चंदना मेंढक, श्रेणिक सुखकर धीर॥
चार ओर भवि कमल विराजें, भक्ति फूल सुख नीर।
'द्यानत' तीरथनायक ध्यावैं, मिट जावै भव-भीर॥

अर्थ :— अहो ! आज की यह घड़ी धन्य है, जो मुझे पावापुर से मोक्ष पधारे भगवान महावीर के दर्शन हुये।

उन्हीं के दर्शन से गौतम स्वामी, चन्दना, मेंढक, राजा श्रेणिक आदि को महासुख की प्राप्ति हुई थी।

भगवान महावीर के चारों ओर भव्यजीव रूपी कमल सुख-सरोवर में शोभायमान हो रहे हैं।

कविवर द्यानतराय कहते हैं कि तीर्थनायक भगवान महावीर का ध्यान करने से समस्त संसार-दुःख मिट जाता है।

(11)

दिढ़ कर्माचल दलन पवि, भवि सरोज रविराय।
 कंचन छवि कर जोर कवि, नमत वीर जिन पाँय॥
 रहौ दूर अन्तर की महिमा, बाहिज गुन वरन न बल का पै।
 एक हजार आठ लच्छन तन, तेज कोटि रवि किरनि उथापै॥
 सुरपति सहस आँख अँजुलि सौं, रूपामृत पीवत नहिं धापै।
 तुम बिन कौन समर्थ वीर जिन, जग सौं काढ़ि मोख में थापै॥

—महाकवि भूधरदास, जैनशतक, छन्द 9, 10

अर्थ :— जो प्रबल कर्मरूपी पर्वत को चकनाचूर करने के लिए वज्र के समान हैं, भव्यजीवरूपी कमलों को खिलाने के लिए श्रेष्ठ सूर्य के समान हैं और जिनकी प्रभा स्वर्णिम है; उन भगवान महावीर के चरणों में मैं हाथ जोड़कर प्रणाम करता हूँ।

हे भगवान महावीर ! आपके अन्तरंग गुणों की महिमा तो दूर, बहिरंग गुणों का वर्णन करने की भी सामर्थ्य किसी में नहीं है।

एक हजार आठ लक्षों से युक्त आपके शरीर का तेज करोड़ों सूर्यों की किरणों को उखाड़ फेंकता है अर्थात् आपके शरीर के तेज की बराबरी करोड़ों सूर्य भी नहीं कर सकते हैं। देवताओं का राजा इन्द्र हजार आँखों की अंजुलि से भी आपके रूपामृत को पीता हुआ तृप्त नहीं होता है।

हे वीर प्रभो ! इस जगत् में आपके अतिरिक्त अन्य कौन ऐसा समर्थ है, जो जीवों को संसार से निकालकर मोक्ष में स्थापित कर सके?

(12)

भजि भजि भजि मन महावीर।
धरि समता अति चित्त गहीर॥
वीर भजनि भागई भय भीर,
वीर भजनि है सिव सुख सीर।
मन वच तन काहू न लगार,
अन्तर बाहर न व्यथत पीर॥
वीर भजनि भवजलनिधि तीर,
लहत गहत निज गुन गंभीर।
भव सायर सैं अधिक गहीर,
सीह कहै जपियै जिनवीर॥

—सिंहकीर्ति, (जगराम पदावली, पृष्ठ 50)

अर्थ :— हे मन ! सदैव भगवान महावीर का भजन कर ! अत्यन्त गम्भीरतापूर्वक चित्त में समता धारण कर ।

महावीर भगवान के भजन से संसार-दुःखों का भय भाग जाता है और मोक्ष-सुख का स्वाद प्रकट होता है । मन-वचन-काय से सम्बन्धित अथवा आंतरिक व बाह्य किसी प्रकार का किंचित् भी दुःख नहीं होता है ।

महावीर भगवान के भजन से संसार-सागर का किनारा प्राप्त हो जाता है, और अत्यधिक गम्भीर आत्मिक गुणों की प्राप्ति हो जाती है ।

कविवर सिंहकीर्ति कहते हैं कि हे मन ! तू सदैव भगवान महावीर का स्मरण कर !

(13)

माधुरी जिनवांनि चलौ सुनिहो।

विपुलाचल पर बाजे बाजत, भुनक परी मेरे कानि॥

वर्द्धमान तीर्थकर आये री, वन्दे निज गुरु जानि।

जाके वन्दत पड़्यत है री, मुक्ति महासुख खानि॥

सखियन सहित चेलना रानी, चली भक्ति उर आनि।

दरसन करि अति भई प्रफुल्लित, 'जग' प्रभु सौं हित सानि॥

—जगराम पदावली, पृष्ठ 5

अर्थ :— हे सखी ! चलो, भगवान महावीर की मधुर-मधुर जिनवाणी सुनेंगे। मुझे कानों में सुनाई दे रहा है कि विपुलाचल पर्वत पर बाजे बज रहे हैं, वे अवश्य वहाँ पधारे हैं। हम उन्हें अपना गुरु मानकर उनकी वन्दना करेंगे। उनकी वन्दना से मोक्षरूपी महासुख का भण्डार प्राप्त होता है।

इसप्रकार महारानी चेलना अपनी सखियों को साथ लेकर एवं हृदय में अपार भक्तिपूर्वक भगवान महावीर के समवशरण में पहुँची और वहाँ भगवान के दर्शन कर अत्यन्त प्रसन्न हुई।

कविवर जगराम कहते हैं कि हे जीवों ! तुम भी भगवान महावीर से ही लौ लगाओ।

(14)

नमो नमो जै श्री महावीर अंतिम तीर्थकर।
अघहर प्रभु जाके गौतम गणधर धीर॥
श्रोता श्रेणिक नृप समदिट्ठी, पूछे वद पुराण गहीर।
सो उपदेश चलत है अजुहौं लौं, तातैं 'जग' खोवत भव भीर॥

—जगराम पदावली, पृष्ठ 5

अर्थ :— अंतिम तीर्थकर श्री महावीर भगवान की जय हो। मैं उन्हें बारम्बार नमस्कार करता हूँ।

उनके गौतम जैसे धीर-गंभीर गणधर हैं जो सर्व पापों को दूर करनेवाले हैं और राजा श्रेणिक जैसे सम्यग्दृष्टि श्रोता हैं जो उनसे पुराण आदि के गंभीर प्रश्न पूछते हैं।

कविवर जगराम कहते हैं कि भगवान महावीर का वही धर्मोपदेश आज तक चल रहा है और उसी के द्वारा जगत् के प्राणी अपने संसार-दुःखों का अभाव कर रहे हैं।

(15)

महावीर जिन मुक्ति पधारे।
 सब सुर नर मिलि आये सारे।
 पावापुर में घरि-घरि द्वारे, दीपक ज्योति भये उजियारे॥
 नर नारी वन्दन को चरि, पूजन को कर मोदक धारे।
 पुरी निकट जब वन में आये, प्रथमहिं देवन सीस नवाए॥
 देखा प्रभु का तन क्षिरिया रे, रहे केश-नख फिरि खरिया रे।
 चंदन अगरादिक संग लाये, अगनिकुमारनि मस्तक नाए॥
 मुकटानि सै जु अगनि झरिया रे, ता करि तन संस्कार भया रे।
 भस्मी देवनि सीस चढ़ाई, नृति भक्ति करि जिनगुन गाई।
 करि निर्वाण कल्याणक भारे, इंद्रादिक निज थान सिधारे॥

—जगराम पदावली, पृष्ठ 26

अर्थ :— अहो ! आज महावीर स्वामी मोक्ष पधारे हैं। सभी देव और मनुष्य एकत्रित होकर यहाँ आये हैं। आज यहाँ प्रत्येक घर के द्वार पर दीपकों का प्रकाश जगमगा रहा है। सभी नर-नारी हाथों में मोदक लेकर भगवान की वन्दना को जा रहे हैं। देवों ने पावापुरी के निकट आते ही मस्तक झुकाकर भगवान को नमस्कार किया। जब उन्होंने देखा कि भगवान का शरीर खिर गया है और केश-नख शेष रह गये हैं, तब अग्निकुमार देवों ने साथ में लाये चन्दन-अगरादि के साथ मस्तक झुका दिया और उनके मुकुटों से अग्नि प्रज्वलित हो गई, जिससे उनके शरीर का संस्कार सम्पन्न हो गया। सभी देवों ने उस भस्म को शिर से लगाया और भक्तिपूर्वक नृत्य करके जिनगुण-गान किया। इसप्रकार सभी इंद्रादिक भगवान का निर्वाण कल्याणक मनाकर अपने-अपने स्थान पर चले गये।

(16)

विपुलाचल पर जिनवर आये, सुनत श्रवण नृप श्रेणिक धाये ।
 समवसरन सुर धनद बनाये, जासु रुचिरता त्रिभुवन छाये ॥
 द्वादश सभा जहाँ दरसाये, तामधि आप जिनेश सुहाये ।
 जातविरोध त्याग पशु आये, जिनपद सेवत प्रीत बढाये ॥
 इन्द्र जजत सत मोद उपाये, हरखि-हरखि गुन-गान कराये ।
 जिनधुनि मनहुँ मेघ गरजाये, सब जिय निजभाषा लखि पाये ॥
 गौतम गनधर अरथ सुनाये, धर्मश्रवण करि पाप नसाये ।
 श्रेणिक सोलह भावन भाये, प्रकृति तीर्थकर बन्ध कराये ॥
 'देवीदास' चरनन लव लाये, कर जुग जोर नमत शिर नाये ।
 हम प्रभु के सरनागत आये, राखि लेहु प्रभु मोहि अपनाये ॥

—वृन्दावन-विलास, वृन्दावन-देवीदास-पदावली, पद 10, पृष्ठ 60

अर्थ :— अहो, आज विपुलाचल पर्वत पर भगवान महावीर पधारे हैं—
 यह सुनकर राजा श्रेणिक उनके दर्शन हेतु दौड़ पड़े हैं। धनकुबेर देवों ने
 उनका समवशरण इतना सुन्दर बनाया है कि उसकी सुन्दरता तीन लोक
 में छा गई है। उस समवशरण में बारह सभाएँ हैं, जिनके मध्य में श्री
 महावीर जिनेन्द्र शोभायमान हैं। सभी जन्मजात विरोधी पशु भी अपना वैर
 त्यागकर वहाँ आये हैं और भगवान के चरणों की सेवा से परस्पर प्रेमभाव
 धारण करने लगे हैं, इन्द्र भी अत्यन्त प्रमोदपूर्वक भगवान की पूजा कर
 रहा है और खुश हो-होकर बार-बार उनका गुणगान कर रहा है। मेघगर्जना
 के समान भगवान की दिव्य ध्वनि हो रही है जिसे सभी जीव अपनी-अपनी
 भाषा में समझ रहे हैं। गौतम गणधर उसके विशेष अर्थ समझा रहे हैं।
 सभी जीव धर्मश्रवण करके पाप नाश कर रहे हैं। राजा श्रेणिक ने
 सोलहकारण भावनाएँ भाकर तीर्थकर प्रकृति का बन्ध किया है।

कविवर देवीदास कहते हैं कि हे भगवान महावीर ! मैं भी आपसे लगन
 लगाता हूँ, आपको हाथ जोड़कर, सिर झुकाकर नमस्कार करता हूँ और
 आपकी शरण में आता हूँ। आप मुझे अपना लीजिए, मेरी रक्षा कीजिये।

(17)

बधाई भई है महावीर, हो जी म्हारै, नैनन लखि हरषाय ॥ टेक ॥
बनि आई सब मौज री, मुख कहिय न जाय।
हो जी म्हारै बिछुरत बनि नहिं आय ॥
दुख खोयौ सब जनम कौ, आनंद बढ़ाय।
हो जी मैं तो सब विधि पूजौ पाय ॥

—कविवर बुधजन (जैन पदसंग्रह, भाग 5, पृष्ठ 78)

अर्थ :— अहो ! यह बहुत बधाई की बात है कि आज मेरे नेत्र भगवान महावीर के दर्शन करके हर्षित हो रहे हैं।

आज मुझे सर्व आनन्द प्राप्त हो गया है। आज के आनन्द को मुख से कहा ही नहीं जा सकता है। अब मुझे उनसे कभी बिछुड़ा नहीं जाएगा।

आज मेरे जन्म-जन्मान्तरों के सर्व दुःखों का अभाव हो गया है और निरन्तर आनन्द की वृद्धि हो रही है।

कविवर बुधजन कहते हैं कि मैं सर्वप्रकार से भगवान महावीर के चरणों की पूजा करता हूँ।

(18)

दर्शन के देखत भूख टरी।
 समोसरन महावीर विराजे, तीन छत्र सिर ऊपर राजे।
 भामण्डल से रवि-शशि लाजे, चँवर ढरत जैसे मेघझरी ॥
 सुर नर मुनिजन बैठे सारे, द्वादशसभा सु गणधर ग्यारे।
 सुनत धरम भये हरष अपारे, बानी प्रभुजी थारी प्रीतभरी ॥
 मुनिवरधर्म और गृहवासी, दोनों रीत जिनेश प्रकाशी।
 सुनत कटी ममता को फाँसी, तृष्णा डायन आप मरी ॥
 तुम दाता तुम ब्रह्म महेशा, तुम हि धनन्तर बैद जिनेशा।
 काटो 'नयनानन्द' कलेशा, तुम ईश्वर तुम राम हरी ॥

अर्थ :— अहो ! भगवान महावीर का दर्शन करने से सम्पूर्ण तृष्णाओं का अन्त हो गया।

भगवान महावीर समवसरण में विराजमान हैं, उनके मस्तक पर तीन छत्र शोभायमान हैं। भामण्डल की प्रभा सूर्य और चन्द्रमा को लज्जित कर रही है। डुलाये जा रहे चँवर मेघों की झड़ी जैसे प्रतीत हो रहे हैं। उस द्वादशकक्षी रमणीय सभी में देव, मनुष्य, मुनिजन तथा ग्यारह गणधर विराजमान हैं। भगवान ने दिव्यध्वनि में धर्मोपदेश दिया। उस धर्मप्रवचन को सुनकर अपार हर्ष हुआ। हे भगवन् ! आपकी वाणी प्रीति-भरी है। आप ने मुनिधर्म और गृहस्थधर्म दोनों की रीति प्रकाशित की है। आप का उपदेश श्रवण कर मोह-ममता का बन्धन कट गया है, तृष्णारूपी डायन अपने आप मर गई है।

कविवर नयनानाद कहते हैं कि हे परमात्मन् ! तुम्हीं दाता हो, तुम्हीं ब्रह्मा हो, तुम्हीं महेश हो, तुम्हीं धन्वन्तरि वैद्य हो, तुम्हीं जिनेश्वर हो, तुम्हीं ईश्वर हो, तुम्हीं राम हो और तुम्हीं हरि हो। हे भगवन ! मेरे क्लेशों का अंत कीजिए।

(19)

जय श्री वीर जिनेन्द्र चन्द्र, शत इन्द्र वन्द्य जगतारं॥
 सिद्धार्थ कुल कमल अमल रवि, भव-भूधर पवि भारं।
 गुण-मनि-कोष अदोष मोखपति, विपिन-कषाय-तुषारं॥
 मदन-कदन शिव-सदन पद नमति, नित अनमित यति सारं।
 रमा-अनन्त-कन्त अन्तक-कृत-अन्त जन्तु-हितकारं॥
 फन्द चन्दना कन्दन दादुर, दुरित तुरित निर्वारं।
 रुद्ररचित अतिरुद्र उपद्रव, पवन अद्रिपति सारं॥
 अन्तातीत अचिन्त्य सुगुण तुम, कहत लहत को पारं।
 हे जगमौल ! 'दौल' तेरे क्रम, नमें शीश कर धारं॥

अर्थ :— सौ इन्द्रों द्वारा वन्दनीय और जगत को तारने वाले श्री महावीर जिनेन्द्र रूपी चन्द्रमा जयवन्त रहें।

वे राजा सिद्धार्थ के कुलरूपी स्वच्छ कमल के लिए सूर्य हैं, संसाररूपी पर्वत के लिए मजबूत वज्र हैं, गुणरूपी मणियों के भण्डार हैं, निर्दोष मोक्ष के स्वामी हैं और कषायरूपी जगत के लिए बर्फ के समान हैं।

वे कामदेव को नष्ट करनेवाले हैं और कल्याण के घर हैं। उनके चरणों में नित्य अगणित श्रेष्ठ यति नमस्कार करते हैं। वे अनन्त लक्ष्मी के पति हैं, मृत्यु का अन्त करनेवाले हैं और प्राणिमात्र का हित करनेवाले हैं।

वे चन्दना के बन्धनों को काटने वाले हैं और मेंढक के पापों को तुरन्त मिटाने वाले हैं। रुद्र द्वारा किये गये महाभयंकर उपद्रव की पवन के समक्ष वे श्रेष्ठ पर्वतराज हैं।

कविवर दौलतराम कहते हैं कि हे जगत-शिरोमणि महावीर जिनेन्द्र ! आपके सुगुण अनन्त और अचिन्त्य हैं। उन्हें कहने में कौन पार पा सकता है? मैं आपके चरणों में हाथ जोड़कर मस्तक झुकाता हूँ।

(20)

जय शिव-कामिनि-कन्त ! वीर भगवन्त अनन्त सुखाकर हैं ।
 विधि-गिरि-गज्जन बुध-मन-रज्जन, भ्रम-तम-भञ्जन भाकर हैं ॥
 जिन उपदेश्यो दुविध धर्म जो, सो सुर-सिद्ध-रमाकर हैं ।
 भवि-उर-कुमुदिन-मोदन भव-तप-हरन अनूप निशाकर हैं ॥
 परम विराग रहें जगत्तैं पै, जगत-जीव रक्षाकर हैं ।
 इन्द्र फणीन्द्र खगेन्द्र चन्द्र जग-ठाकर ताके चाकर हैं ॥
 जासु अनन्त सुगुण मणिगण नित, गणते मुनिजन थाक रहें ।
 जा प्रभु पद नव केवल लब्धि सु, कमला को कमलाकर हैं ॥
 जाके ध्यान-कृपान राग-रुष, पास-हरन समताकर हैं ।
 'दौल' नमें कर जोर हरन भव-बाधा शिवराधाकर हैं ॥

अर्थ :— हे मोक्षरूपी स्त्री के स्वामी श्री महावीर भगवान ! आप अनन्त सुख के भण्डार हैं । आपकी जय हो । आप जीवों के मन को प्रसन्न करनेवाले हैं और भ्रमरूपी अन्धकार को नष्ट करनेवाले सूर्य हैं ।

आपने गृहस्थ और मुनि के भेद से दो प्रकार के धर्म का जो उपदेश दिया है वह स्वर्ग के वैभव और मोक्षरूपी लक्ष्मी को प्राप्त कराने वाला है । आप भव्यजीवों के हृदय-कमल को प्रसन्न करने वाले और संसार के ताप को दूर करने वाले अनुपम चन्द्रमा हैं ।

यद्यपि आप जगत से अत्यन्त विरागी रहते हैं, तथापि जगत के जीवों की रक्षा करने वाले हैं । इन्द्र, नागेन्द्र, विद्याधर, चन्द्र जैसे जगत के स्वामी भी आपके सेवक हैं ।

बड़े-बड़े मुनि भी आपके अनन्त गुणरूपी मणि-समुदाय को नित्य गिनते-गिनते थक गये हैं । आपके चरण नव केवललब्धियों की लक्ष्मी के लिए समुद्र के समान हैं । आपके ध्यान की तलवार राग-द्वेष के बन्धन को काटकर समता उत्पन्न करने वाली है ।

कविवर दौलतराम कहते हैं कि हे महावीर भगवान ! आप संसार-दुःख को दूर करनेवाले और मोक्षरूपी स्त्री को प्रदान करनेवाले हैं । मैं आपको हाथ जोड़कर नमस्कार करता हूँ ।

(21)

जय श्री वीर जिनवीर जिनचन्द, कलुष-निकन्द मुनिहृद सुखकन्द ॥
 सिद्धारथनन्द त्रिभुवन को दिनेन्द-चन्द, जा वच-किरन भ्रम-तिमिर-निकन्द ।
 जाके पद-अरविन्द सेवत सुरेन्द्रवृन्द, जाके गुण रटत कटत भव-फन्द ॥
 जाकी शान्तमुद्रा निरखत हरखत रिषि, जाके अनुभवत लहत चिदानन्द ।
 जाके घातिकर्म विघटत प्रगटत भये, अनन्त दरश-बोध-वीरज-आनन्द ॥
 लोकालोक-ज्ञाता पै स्वभावरत राता प्रभु, जग को कुशलदाता त्राता अद्वन्द ।
 जाकी महिमा अपार गणी न सके उचार, 'दौलत' नमत सुख चाहत अमन्द ॥

अर्थ :— पापों को नष्ट करनेवाले और मुनियों के हृदय को अपार सुख देने वाले श्री वीर जिनेन्द्र की जय हो, महावीर जिनेन्द्र की जय हो ।

श्री महावीर जिनेन्द्र राजा सिद्धार्थ के पुत्र हैं और तीनों लोकों के लिए ऐसे सूर्य-चन्द्र हैं जिनकी वचनरूपी किरणें भ्रमरूपी अन्धकार को समाप्त कर देती हैं । इन्द्र-समुदाय भी उनके चरण-कमलों का सेवन करते हैं । उनके गुणों के जाप से संसार के बन्धन कट जाते हैं ।

उनकी शान्त मुद्रा को देखकर ऋषिगण भी हर्षित होते हैं, क्योंकि उसका अनुभव करने से चैतन्य के आनन्द की प्राप्ति होती है । उनके चार घातिया कर्म नष्ट हो गये हैं और अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त वीर्य एवं अनन्त सुख प्रकट हो गये हैं ।

वे सम्पूर्ण लोकालोक के ज्ञाता हैं, फिर भी अपने स्वभाव में पूर्णतया लीन हैं । वे जगत के प्राणियों को कुशलता प्रदान करनेवाले हैं और उनके सच्चे रक्षक हैं ।

कविवर दौलतराम कहते हैं कि श्री महावीर जिनेन्द्र की महिमा अपार है, गणधर भी उसका उच्चारण नहीं कर सकते हैं; मैं अनन्त सुख को चाहता हुआ उनको नमस्कार करता हूँ ।

(22)

सब मिल देखो हेली म्हारी हे, त्रिशला-बाल वदन रसाल ॥
 आये जुत समवसरन कृपाल, विचरत अभय व्याल-मराल ॥
 फलित भई सकल तरु-माल ॥
 नैन न हाल भृकुटी न चाल, बैन विदारै विभ्रम-जाल ॥
 छवि लखि होत सन्त निहाल ॥
 वन्दन काज साज समाज, संग लिये स्वजन-पुरजन ब्राज ॥
 श्रेणिक चलत है नरपाल ॥
 यों कहि मोदयुत पुरवाल, लखन चाली चरम जिनपाल ॥
 'दौलत' नमत कर धर भाल ॥

अर्थ :— हे मेरी सहेलियो ! आओ, सब मिलकर त्रिशला माता के पुत्र के सुन्दर मुख को देखो ।

त्रिशला माता के पुत्र अर्थात् श्री महावीर भगवान बड़े कृपालु हैं । वे आज समवशरण-सहित यहाँ पधारे हैं और उनके निकट साँप एवं हाथी आदि पशु भी निर्भयतापूर्वक विचरण कर रहे हैं । उनके आगमन से सभी ऋतुओं के वृक्ष भी फलीभूत हो गये हैं ।

उनके नेत्र हिलते नहीं हैं, उनकी भौहें भी चंचल नहीं होती हैं, उनके वचन भ्रमरूपी जाल को काट फेंकते हैं और सन्त पुरुष उनकी मुद्रा को देखकर निहाल हो जाते हैं ।

भगवान की वन्दना के लिए राजा श्रेणिक अपने समस्त स्वजनों, नगरजनों एवं स्त्रियों के समूह को साथ लेकर चल रहा है ।

कविवर दौलतराम कहते हैं कि नगर की स्त्रियाँ इसप्रकार की बातें कहती हुई हर्षित होकर अन्तिम तीर्थकर श्री महावीर भगवान को देखने चल दीं । मैं भी उनको हाथ जोड़कर, मस्तक झुकाकर नमस्कार करता हूँ ।

(23)

हमारी वीर हरो भवपीर ॥
 मैं भवदुखित दयामृत-सर तुम, लखि आयो तुम तीर ।
 तुम परमेश मोखमग-दर्शक, मोह-दवानल नीर ॥
 तुम बिन हेत जगत-उपकारी, शुद्ध चिदानन्द धीर ।
 गनपति ज्ञान-समुद्र न लंघे, तुम गुनसिन्धु गहीर ॥
 याद नहीं मैं विपति सही जो, धर-धर अमित शरीर ।
 तुम गुन चिंतित नशत तथा भय, ज्यों घन चलत समीर ॥
 कोटि बार की अरज यही है, मैं दुख सहूँ अधीर ।
 हरहु वेदना फन्द 'दौल' की, कतर कर्म-जञ्जीर ॥

अर्थ :— हे महावीर भगवान ! मेरे संसार-दुःख को दूर करो ।

हे स्वामी ! मैं इस संसार में बहुत दुःखी हूँ और यह जानकर आपके पास आया हूँ कि आप दयारूपी अमृत के सरोवर हैं । हे स्वामी ! आप परमेश्वर हैं, मोक्षमार्ग को दिखानेवाले हैं और मोहरूपी भयंकर अग्नि के लिए जल हैं ।

हे प्रभो ! आप अहेतुक रूप से संसार का उपकार करनेवाले हैं, शुद्ध हैं, चिदानन्दमयी हैं और धैर्यवान हैं । गणधर भी आपके ज्ञानरूपी समुद्र का पार नहीं पा सकते हैं । आपका गुणरूपी सागर बहुत गहरा है ।

हे भगवन् ! इस संसार में अनन्त शरीर धारण कर-करके मैंने जो अपार दुःख भोगा है उसकी आज मुझे याद नहीं है, किन्तु अब उस सब का भय आपके गुणों का चिन्तन करने से उसी प्रकार नष्ट हो गया है, जिस प्रकार कि तेज हवा चलने से बादल नष्ट हो जाते हैं ।

कविवर दौलतराम कहते हैं कि हे प्रभो ! मैं यहाँ दुःख सहता हुआ बहुत बेचैन हो चुका हूँ और आपसे कोटिशः प्रार्थना करता हूँ कि आप मेरी इस वेदना को दूर कीजिए, मेरी कर्म-बेड़ी को काट डालिए ।

(24)

वन्दों अद्भुत चन्द्र वीर जिन, भवि-चकोर-चित-हारी ॥
 सिद्धार्थ नृप-कुल-नभ-मण्डन, खण्डन भ्रम-तम भारी ।
 परमानन्द-जलधि विस्तारन, पाप-ताप छयकारी ॥
 उदित निरन्तर त्रिभुवन अन्तर, कीरत-किरन पसारी ।
 दोष मलंक कलंक अटंकित, मोह-राहु निरवारी ॥
 कर्मावरण पयोद अरोधित, बोधित शिवमगचारी ।
 गणधरादि मुनि उडुगन सेवत, नित पूनम तिथि धारी ॥
 अखिल अलोकाकाश उलंघन, जासु ज्ञान उजियारी ।
 'दौलत'-मनसा-कुमुदिन-मोदन, जयो चरम जगतारी ॥

अर्थ :— मैं महावीर जिनेन्द्र रूपी उस अद्भुत चन्द्रमा को नमस्कार करता हूँ जो भव्यजीव रूपी चकोर पक्षियों के चित्त को आकर्षित करनेवाला है।

महावीर जिनेन्द्ररूपी चन्द्रमा राजा सिद्धार्थ के कुलरूपी आकाश को सुशोभित करनेवाला है, भ्रमरूपी घोर अन्धकार को नष्ट करनेवाला है, परमानन्दरूपी समुद्र को बढ़ाने वाला है और पापरूपी गर्मी को समाप्त करनेवाला है।

महावीर जिनेन्द्ररूपी चन्द्रमा सदा उदित रहनेवाला है। उसकी कीर्तिरूपी किरणें तीनों लोकों के अन्दर फैली हुई हैं। वह दोष एवं मलरूपी कलंक से रहित है और मोहरूपी राहु को दूर करनेवाला है।

महावीर जिनेन्द्ररूपी चन्द्रमा कर्मावरणरूपी बादलों से रोका नहीं जा सकता है, वह मोक्षमार्गी जीवों को राह दिखाता है, गणधर आदि जैसे मुनिरूपी तारे उसका सेवन करते हैं और वह सदा पूर्णिमा तिथि का ही रूप धारण किये रहता है। उसकी ज्ञानरूपी चाँदनी सम्पूर्ण अलोकाकाश के भी पार पहुँच जाती है।

कविवर दौलतराम कहते हैं कि हे मेरे मनरूपी कमल को प्रसन्न करनेवाले अन्तिम तीर्थंकर ! आपकी जय हो।

(25)

सिद्धार्थ राजा दरबारे, बँटत बधाई रंग भरी हो ॥
 त्रिसला देवी ने सुत जायो, वर्द्धमान जिनराज वरी हो ।
 कुण्डलपुर में घर-घर द्वारे, होय रही आनन्द-घरी हो ॥
 रत्नन की वर्षा को होते, पन्द्रह मास भये सगरी हो ।
 आज गगन दिश निरमल दीखत, पुष्पवृष्टि गन्धोद झरी हो ॥
 जन्मत जिनके जग सुख पाया, दूरि गये सब दुख टरी हो ।
 अन्तर्मुहूर्त नारकी सुखिया, ऐसो अतिशय जन्म घरी हो ॥
 दान देय नृप ने बहुतेरो, जाचिक जन-मन हर्ष करी हो ।
 ऐसे वीर जिनेश्वर चरणों, 'बुध महाचन्द्र' जु सीस धरी हो ॥

अर्थ :— अहो, आज महाराज सिद्धार्थ के दरबार में रंग-भरी बधाई बँट रही है। देवी त्रिशला ने पुत्र प्रसव किया है। वह पुत्र जिनराज वर्द्धमान हैं। कुण्डलपुर में घर-घर और द्वार-द्वार आनन्द की यह शुभ घड़ी व्याप्त हो रही है। अहो ! रत्नों की वर्षा होते पन्द्रह मास हो गये। आज आकाशदीप्त शिखाएँ निर्मल प्रतीत हो रही हैं और पुष्प-वृष्टि हो रही है, गन्धोदक की झड़ी लगी हुई है। भगवान के जन्म-ग्रहण करते समय संसार ने सुख पाया और सब दुःख दूर हो गये, टल गये। भगवान का अतिशय-युक्त जन्म-वर्णन कैसे किया जाए, उस समय अन्तर्मुहूर्त के लिए नारकियों को भी सुख-प्राप्ति हुई। राजा ने बहुत-सा दान देकर याचकों तथा जनमानस को हर्षित कर दिया। कविवर बुध महाचन्द्र कहते हैं कि मैं ऐसे वीर जिनेश्वर के चरणों में मस्तक नवाते हुए विनय-भक्ति करता हूँ।

(26)

झूलें श्री वीर जिनेन्द्र पलना, त्रिशला देवी के ललना॥
 कंचन मनिमय रतनजड़ित वर, रेशम डोरी के फन्द।
 चित्र खचित झल्लर मुतियन की, दुति लखि लाजत चन्द॥
 श्री ही आदि झुलावें प्रेम धरि, गावें मंगल छन्द।
 छप्पन कुमारी घड़ी इत उत में, ढोरें चमर अनन्द॥
 मुलकि मुलकि पग हाथ चलावत, विहँसत मन्द सुमन्द।
 निरखि निरखि छवि लखत 'हजारी', थकित सुरासुर वृन्द॥

अर्थ :— श्री महावीर जिनेन्द्र पालने में झूल रहे हैं। वे माता त्रिशला देवी के लाल हैं। उनका पलना सुवर्ण, मणि और रत्नावली से जड़ित है। उसमें रेशम की डोरी का फन्दा लगा हुआ है। वह चित्र-विचित्र मुक्ताफलों की झालरों से सुशोभित है। उसमें झूलते हुए बाल जिनेन्द्र की रूप माधुरी का दर्शन कर चन्द्रमा की द्युति भी लज्जित हो रही है। उन्हें श्री और ही देवियाँ सप्रेम झुला रही हैं और मंगल छन्दों का उद्गान कर रही हैं। इधर-उधर खड़ी हुई आनन्दमग्न छप्पन कुमारियाँ चामर दुला रही हैं। बाल भगवान् मुलक-मुलक कर मन्दस्मित करते हुए हाथ-पग चला रहे हैं। मन्दहास विकीर्ण कर रहे हैं। कविवर हजारी कहते हैं कि इस छवि को देख कर सुर-असुर आदि के समस्त समूह अत्यन्त प्रसन्न हो रहे हैं।

कवि-परिचय

1. **द्यानतराय** :— इनका समय विक्रम की 18वीं शताब्दी है। ये आगरा के रहनेवाले थे और वहाँ की 'अध्यात्म सैली' में नित्य शास्त्र-स्वाध्याय करते थे। इनकी तीन रचनाएँ उपलब्ध हैं— 1. द्यानत-विलास, 2. आगम-विलास, और 3. भेदविज्ञान या आत्मानुभव। इनकी अनेकानेक पूजाएँ और पद आज तक बहुत लोकप्रिय हैं।

2. **भूधरदास** :— इनका समय भी विक्रम की 18वीं शताब्दी है। ये भी आगरा की 'अध्यात्म सैली' के प्रमुख सदस्य थे। इनकी तीन रचनाएँ उपलब्ध हैं— 1. पार्श्वपुराण, 2. जैनशतक, और 3. पद-संग्रह या भूधर-विलास।

3. **सिंहकीर्ति** :— इनका अधिक परिचय हमें ज्ञात नहीं हो सका है, पर इतना अवश्य ज्ञात हुआ है कि इनका समय विक्रम की 16वीं शताब्दी है।

4. **जगराम** :— ये खण्डेलवाल वंश के गोदीका गोत्रिय जैन थे, अतः इनका पूरा नाम जगराम गोदीका है। इनका अधिक परिचय तो उपलब्ध नहीं होता, पर इतना अवश्य प्रतीत होता है कि ये विक्रम की 19वीं शताब्दी के प्रथम चरण में कामा, भरतपुर (राजस्थान) के आस-पास कहीं रहते थे और श्रेष्ठ कवि थे। अभी-अभी इनके पदों का संग्रह 'जगराम गोदीका पदावली' डॉ० गंगाराम गर्ग भरतपुर ने प्रकाशित किया है।

5. **देवीदास** :— इनका समय वि०सं० 1780 से 1830 तक है। ये बुन्देलखण्ड के टीकमगढ़ जिले के दिगौड़ा ग्राम के रहनेवाले थे। इनकी रचनाओं का संग्रह वर्तमान में 'देवीदास-विलास' (संपादक—डॉ० विद्यावती जैन, प्रकाशक—गणेश वर्णी जैन संस्थान वाराणसी) के नाम से उपलब्ध है।

6. **बुधजन** :— इनका वास्तविक नाम वृद्धिचन्द था। इनका समय विक्रम की 19वीं शताब्दी का मध्य भाग माना जाता है। ये जयपुर के रहने वाले थे और खण्डेलवाल जैन थे। इनकी 6 रचनाएँ उपलब्ध हैं— 1. तत्त्वार्थबोध, 2. योगसार-भाषा, 3. पंचास्तिकाय, 4. बुधजन-सतसई, 5. बुधजन-विलास, और 6. पद-संग्रह।

7. **दौलतराम** :— जैन-साहित्य में दौलतराम नाम के अनेक विद्वान हुये हैं, अतः इन्हें दौलतराम द्वितीय अथवा दौलतराम पल्लीवाल के नाम से जाना जाता है। इनका

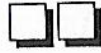
36 : महावीर-पदावली

समय वि०सं० 1855 से 1923 तक है। ये सासनी के रहनेवाले थे, पर आजीविकादि के कारण लम्बे समय तक अलीगढ़ और दिल्ली में रहे थे। इनकी दो रचनाएँ उपलब्ध हैं— 1. छहढाला और 2. पद-संग्रह या दौलत-विलास।

8. बुध महाचन्द्र :— इनका समय विक्रम की बीसवीं शताब्दी का पूर्वार्ध है। ये राजस्थान के सीकर नगर के रहनेवाले थे। इनकी तीन रचनाएँ उपलब्ध हैं— 1. पद-संग्रह, 2. तत्त्वार्थसूत्र-टीका, और 3. त्रिलोकसार-पूजा।

9. नयनानन्द :— इनका समय विक्रम की उन्नीसवीं शताब्दी है। ये राजस्थान के नीबागढ़ नगर के रहनेवाले थे। इनकी दो रचनाएँ उपलब्ध हैं— 1. पदसंग्रह, और 2. गुणधर-चरित्र।

10. हजारी :— इनका परिचय उपलब्ध नहीं हुआ है।



“पायन्त्यध्वगान् गीत्वा बालिका जलमेकशः।
पुनस्तास्ते न मुञ्चन्ति केतकी भ्रमरा इव॥”
-(धर्मसंग्रह श्रावकाचार, 7/109)

अर्थ:- मगध देश की कुलकुमारी-बालिकायें मार्ग में चलने वाले लोगों को मधुर-मधुर गीतों को गाकर जल पिलाती हैं। इसी से पथिक लोग भी फिर उनके जलपान को उसी प्रकार नहीं छोड़ते हैं, जैसे केतकी पुष्प को भ्रमर नहीं छोड़ते हैं।



राजगृह में भगवान् महावीर के समवसरण
में जाते हुये पथिकों को जलपान कराती बालिका